ECONSPEAK: A Journal of Advances in Management IT & Social Sciences,
Vol. 2, Issue 9, September 2012 Impact Factor 2.809 ISSN: (2231-4571)
www.skirec.org Email Id: skirec.org@gmail.com

रीतिकालीन परिवेश और बिहारी का काव्य

डॉ सरिता, सहायक प्राध्यापक

श्याम लाल कॉलेज (सांध्य), दिल्ली वश्व वद्दयालय

हिंदी साहित्य के इतिहास में सम्वत १७०० से १९०० तक के काल को रीतिकाल के नाम से जाना जाता है। रीतिकालीन अ धकांश साहित्य राज्याश्रय में लखा गया दरबारी साहित्य है जिसकी रचना सामंतीय वातावरण मे हुई । इन क वयों की वाणी में सूर और तुलसी जैसी उदात्त चेतना और तन्मयता नहीं है और न ही सामान्य जन की यथार्थ अ भव्यक्ति इनके काव्य का लक्ष्य थी । इनकी समस्त अंतश्चेतना सुरा और सुंदरी तक सी मत थी । रीतिकालीन क वयों ने राधा और कृष्ण की आड़ में श्रृंगारिक प्रवृति को अ भव्यक्त कया है । ये क व राजभक्ति को ही अपना लक्ष्य समझते रहे ।इसी कारण राज्या श्रत क व अपनी समस्त शक्ति आश्रयदाता को चमत्कारिक शैली से प्रभा वत करने में लगाते रहते थे। क व कर्म और सहित्य की उपयो गता को दर कनार करने वाले ये क व 'रीति' का अतिक्रमण करने का साहस नहीं रखते थे, यही कारण है क आधुनिक आलोचकों ने इस साहित्य की उपयो गता पर प्रश्न चन्ह लगाया है। रीतिकालीन क वयों ने रचनात्मक साहित्य की उपेक्षा संस्कृत साहित्य की परम्परा पर लक्षण ग्रंथों का निर्माण कया ।

रीतिकाल में श्रृंगार के साथ साथ वीर,भक्ति और नीति की धारायें भी मलती हैं। यदि रीतिकाल को ब्रज का स्वर्ण काल कहा जाये तो अनु चत नहीं होगा । रीतिकालीन क वयों ने ब्रज भाषा में अपनी काव्य रचनाओं का प्रणयन कया तथा प दरबारी प्रभाव के कारण उसमें अरबी फारसी शब्दों का आना स्वभा वक था। छन्द वधान की दृष्टि से क वत्त और सवैयों की प्रधानता है। इनके काव्य में दोहा और कुण्ड लया छन्द का प्रयोग भी मलता है।

रीतिकालीन काव्य को समझने के लए तत्कालीन सामाजिक, राजनैतिक, धा र्मक एवं साहित्यिक परिस्थितियों को जानना आवश्यक है । क व इसी परिवेश से प्रेरणा प्राप्त कर काव्य रचना करता था । राजनैतिक दृष्टि से यह काल मुगल साम्राज्य के पूर्ण वैभव का काल है । मुगल साम्राज्य के प्रतिष्ठित होने के साथ ही भारतीय सामाजिकजीवन पर इसका प्रभाव परिल क्षत होने लगा था । उसने जिस काव्य संस्कृति और कला को आश्रय

दिया उससे भारत की मूल संस्कृतिक संपदा के वनष्ट होने की संभावना थी । पारम्परिक धर्म पर भी उसने चोट की । अ धकांश मुश्लिम शासक वलासी थे जिसके फलस्वरूप हिंदू राजाओं में भी वला सता की प्रवृति बढने लगी । सुरा सुंदरी और अन्य वलक्षण साम ग्रयों व साधनों से मुगल शासन धीरे धीरे पतन की और बढ़ने लगा । मुगलों के शासन काल में सामंतवाद और रजवाड़ों की जड़े मजबूत हो चुकी थी । उनके थोथे अंहकार और पारस्परिक ईर्ष्या ने अंग्रेजों को भारत में अपनी जड़े जमानेके लए प्रेरित कया । केंद्रीय शासन नष्ट होने लगा था । औरंगजेब के उत्तरा धकारी वलास में डूबे रहते थे, इस काल के अ धकांश क व इन्ही वलासी आश्रयदातओं के आश्रय में रह कर श्रृंगार रसमयी क वताओं का सृजन करना अपने जीवन का लक्ष्य मानते थे ।

इस काल में समाज की दशा भी अत्यन्त शोचनीय थी। महलों के वलासमय जीवन का प्रभाव जनसामान्य पर पड़ा । वला सता को ही जीवन मूल्य मान लेने के फलस्वरूप जीवन के उच्चतर मूल्य का ह्रास होने लगा । जाति पाति-, बाल ववाह तथा स्त्री प्रथा जैसी - अनेक कुप्रथाएं समाज में व्याप्त थी ।'स्त्री' वलास का साधनमाने जाने वाली वस्तु के रूप में सुशो भत थी । इस काल में निम्न वर्ग, कृषक, मजदूर, कारीगर सदा की भांति उपे क्षत था इनकी दशा अत्यंत खराब थी ।

धा र्मक दृष्टि से ह्रासोन्मुख रीतिकाल में वला सता, अंध वश्वास, रूढ़ियों और आडम्बरों का प्राधान्य था । वैष्णव धर्म में राम तथा कृष्ण भक्ति में वला सता का भाव आ जाने के कारण कामुकता की अ भव्यक्ति खुल कर हुई । मुसलमानों ने जिस काव्य संस्कृति और कला को आश्रय दिया उससे भारत की सांस्कृतिक संपदा वनष्ट होनेके कगार पर थी । इस युग के क व साहित्यकार अपने आश्रदाताओं की इच्छानुसार श्रृंगारपरक और / चमत्कारपूर्ण कला कौशल के प्रदर्शन में जुट गए। वे क व कर्म के साथ आचार्य कर्म भी करने लगे, उनकी वलासमयी प्रवृति रीति ग्रंथों में भी दृष्टिगत होती है । इस प्रकार रीतिकालीन काव्य दायित्वहीनता का ऐसा काव्यात्मक प्रयास है जिसमें मौ लकता और नैतिकता का सर्वत्र अभाव मलता है। इस प्रकार की ह्रासमयी परिस्थितियों में ही रीतिकालीन साहित्य का प्रणयन हुआ। रीतिकालीन क वयों के काव्य का वर्ण्य वषय उनके परिवेश से ही प्रेरित था।-

रीति सद्ध क वबिहारी

बिहारी एकमात्र ऐसे रीति सद्ध क व हैं जिनकी प्र सद् ध और लोक प्रयता आज भी बनी हुई है। 'महाक व बिहारी का जन्म सं० १६६० में ग्वा लयर के पास बसुआ गो वंदपुर गाँव में हुआ। इनके पता का नाम केशवराय था। ये अपनी युवावस्था में मथुरा

आकर बस गए। परंतु, बाद में जयपुर के राजा जय संह के आश्रय में रहने लगे।'[1] राज्याश्रय के दौरान इन्होंने अर्थ के लए अपने काव्य को बेचा नहीं बल्कि काव्य में 'उ चत उपदेश' को भी ध्यान में रखते हुए जयपुर नरेश को घोर श्रृंगारिकता से उबारा। अतइनके कव्य में : वश्वनाथ प्रसाद मश्र ने ०परोक्ष रूप से लोकमंगल की भावना भी वद्यमान थी। स्वयं पं " - लखा हैवे अर्थ की अपेक्षा राजसभा में बड़प्पन के अ भलाषी थे, वे स्वार्थ सद् ध के स्थान पर समाज सद् ध का ध्यान रखते थे"। राजा जय संह द्वारा हिंदुओं के वरूद्ध लड़ने वाले मुगलों का साथ देने पर बिहारी ने राजा जय संह को अन्योक्तिपरक दोहे से शक्षा भी दी और व्यंग्य भी कया –

स्वार्थ सुकृत न श्रम वृथा, दे ख वहंग वचारी

बाज पराये पानि पर, तू पंछीनु न मारी ।[2]

बिहारी र चत 'बिहारी सतसई' ७०० दोहों का संग्रह है, जिसकी रचना बिहारी ने राजा जय संह के दरबार में रहकर की। इस रचना में श्रृंगार के अंग, उपांग, भाव, वभावअनुभावों . का सूक्ष्म और सुंदर चत्रण मलता है। इस लए आलोचकों का यह कथन शत प्रतिशतसही प्रतीत होता है –

सतसइया के दोहरे, ज्यों ना वक के तीर

देखन में छोटे लगैं, घाव करे गम्भीर ।[3]

दोहे जैसे छोटे छन्द में गम्भीर एवं वशद ववेचन ही बिहारी की लोक प्रयता का आधार है। बिहारी का रचना कौशल उनकी सूक्ष्म निरीक्षण काव्य प्रतिभा का परिचायक है। बिहारी की ब्रजभाषा शुद्ध परिष्कृत साहित्यिक भाषा है जिसमें माधुर्य की छटा वद्यमान है। एक एक शब्द में पूर्णभाव की अ भव्यक्ति द्वारा इन्होंने-'गागर में सागर' भरने की कला को चरितार्थ कर दिखाया है। भरे भवन में नैनों द्वारा बात करने का सूक्ष्म एवं मनोहारी चत्रण बिहारी ही कर सकते हैं –

कहत नटत रीझत खजत मलत खलत लजियात

भरे भौन में करत हैं नैनन ही सो बात ।[4]

'बिहारी सतसई उत्कृष्ट मुक्तक काव्य' रचना है। इसमें मुक्तक शैली की सभी वशेषताएँ मलती हैं। यथागागर में सागर भरना -, स्वतपूर्णता :, भाषा में समास शक्ति, वैयक्तिकता, नाना वषयों का ज्ञान आदि। "मुक्तक क वता में जो गुण होना चाहिए वह

बिहारी के अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँचा है। इसमें कोई संदेह नहीं है। मुक्तक में प्रबंध के समान रस की धारा

नहीं रहती जिसमें कथा प्रसंग की परिस्थिति में अपने को भूला हुआ पाठक मग्न हो जाता है और हृदय में एक स्थायी प्रभाव ग्रहण करता है।'[5] अत: कल्पना की समाहार शक्ति और भाषा की समाहार शक्ति का सफल सामंजस्य बिहारी के मुक्तको का प्राण है। बिहारी भले ही आचार्य न हों, कंतु 'बिहारी सतसई' में प्रद र्शत पाण्डित्य यह प्रमा णत करता है क बिहारी कसी आचार्य से कम नहीं और उनकी सतसई आचार्यत्व के गुण से रहित नहीं।

बिहारी के अतिरिक्त अन्य रीति सद्ध क वयों में रामसहाय दास, नेवाज, पजनेस, रसनि ध आदि का नाम उल्लेखनीय है। डॉ नगेंद्र इन क वयों को 'रीतिबद्ध क व की श्रेणी में रखते हैं और लक्षण ग्रंथकारों को वे रीति क व या आचार्य क व मानते हैं।'[6] परंतु, रामसहाय दास कृत 'राम सतसई' पजनेस कृत 'पजनेस प्रकाश', रसनि ध कृत 'रतन हजारा' रीति सद्ध काव्य की सुंदर रचनाएं हैं।

ब्रज भाषा पर बिहारी का असाधारण अ धकार था। शब्दों को तोड़ने, मरोडने और उनका कलात्मक प्रयोग करने का सामर्थ्य बिहारी में था। बिहारी का एक एक दोहा मर्मस्पर्शी और कलात्मकता का अनूठा नमूना है। सौंदर्य और प्रेम क्रीडा के दृश्यों की जीवंतता इस बात का प्रमाण है। जीवन का सूक्ष्म निरीक्षण कर प्रेम और सौंदर्य के चत्र खींचने वाले चतेरे बिहारी में ब्रज भाषा अपने प्रौढ रूप में दृष्टिगत होती है। "बिहारी की भाषा व्याकरण से इतनी अ धक गठी हुई है; मुहावरों का प्रयोग, शब्दों का संचय, सांकेतिक शब्दावली, सुष्ठु पदावली एसी मंजी हुई है क उनकी भाषा को प्रौढ़ एवं प्रांजल कहना ही पडता है। बिहारी की सी भाषा लखने में हिंदी के बहुत कम क व समर्थ हुए हैं।"[7]

क व बिहारी जिस रीति सद्ध काव्यधारा से सम्बंध रखते थे उस काव्यधारा है में क वयों ने काव्यशास्त्रीय मानदण्डों का निर्वाह तो कया कंतु उन्होंने लक्षण ग्रंथों के स्थान पर केवल लक्षणों के उदाहरण स्वरूप क वताओं का सृजन कया। रीति सद्ध क व मध्यमार्गी थे। ये न तो रीति से स्वयं को पूर्ण रूप से मुक्त कर पाये और न ही रीति का अतिक्रमण कर सके। इनकी रीति की बंधी परिपाटी में आस्था तो पूरी थी परंतु ये उसका गुलाम होकर नहीं चलना चाहते थे। इससे दूर हटना भी इन्हे स्वीकार्य न था। इस प्रकार ये रीतिबद्ध और रीतिमुक्त काव्य के बीच की एक कड़ी के रूप में थे। रीति के सम्पूर्ण शास्त्र में ये सद्ध थे अर्थात रीति के ज्ञाता थे। इन्होंने काव्यशास्त्रीय ज्ञान को अपने मस्तिष्क में रखा और काव्यांग के उदाहरण रूप में रचनाएं लखी। आचार्य वश्वनाथ प्रसाद मश्र के शब्दों में -

"जिन्होंने रीति की सारी परम्परा सद्ध कर ली थी अर्थात जिन्होंने रीति की बंधी बंधाई परिपाटी के अनुकूल ही की है पर उन्होंने लक्षण ग्रंथ प्रस्तुत न करके स्वतंत्र रूप से अपनी रचनाएं रची हैं। वे वस्तुतमध्यमार्गी थे। रीति से बंधे भी थे और उससे कुछ स्वतंत्र होकर : भी चलते थे। रीति सद्ध क वयों मेंबिहारी, सेनापति, बेनी, रसनि ध, नेवाज, पजनेस, रामसहाय दास आदि का नाम लया जाता है। "कृष्ण चंद्र वर्मा रीति सद्ध क वयों को रीत्यानुसारी या लक्षणानुसारी क व कहते हैं। परंतु, रीति सद्ध क व लक्षणों के अनुसार काव्य रचना करने के साथ साथ अपने अनुभवों के आधार पर भी काव्य सृजन करते थे। इन्हे स्वतंत्र काव्य निर्माण की छूट लक्षणग्रंथकारों की अपेक्षा अ धक थी। यही कारण है क मौ लकता, भावप्रवणता और नवीन कल्पनाओं का समावेश इनके काव्य में देखा जा सकता है। रीतिबद्ध क वयों में पष्टपेषण की प्रवृति के कारण कला पक्ष प्रधान और भाव पक्ष गौण है। रीतिमुक्त काव्य में भाव पक्ष की प्रधानता है और कला पक्ष गौण है। जब क रीति सद्ध काव्य भाव और कला पक्ष का समभाव है। इस लए कलागत सौष्ठव और भावप्रवणता का समन्वय रीति सद्ध क वयों की काव्य सृजन में निपुणता को दर्शाता है।

---

[1] बिहारी की वाग्विभूति, वश्वनाथप्रसाद मश्र, पृ. 1

[2]बिहारी सतसई, दोहा 703

[3] हिंदी साहित्य का इतिहास, आचार्य रामचंद्र शुक्ल, पृ 190

[4] बिहारी सतसई, दोहा 137

[5] हिंदी साहित्य का इतिहास, आचार्य रामचंद्र शुक्ल, पृ. 189

[6] हिंदी साहित्य का इतिहास, संपा. डॉ नगेंद्र, पृ. 345

[7] बिहारी की वाग्विभूति, वश्वनाथप्रसाद मश्र, पृ. 171